AMOGHVARTA
ISSN : 2583-3189

स्वामी विवेकानंद एवं शिक्षा

ORIGINAL ARTICLE

Authors
डॉ. ज्योति सिन्हा
सहायक प्राध्यापक
दर्शनशास्त्र विभाग
प्रो. मनोज कुमार सिन्हा
सहायक प्राध्यापक
इतिहास विभाग
वनांचल महाविद्यालय
टण्डवा, चतरा, झारखंड, भारत

शोध सार

स्वामी विवेकानंद आधुनिक भारत के महानतम चिंतकों, समाज सुधारकों तथा शिक्षाशास्त्रियों में से एक थे। उन्होंने शिक्षा को केवल सूचनाओं के संग्रहण का साधन न मानकर उसे मनुष्य के भीतर पहले से विद्यमान पूर्णता को अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया माना। उन्होंने शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान, परीक्षा और रोजगार प्राप्त करने का साधन नहीं माना, बल्कि मनुष्य के सर्वांगीण विकास का माध्यम समझा। शिक्षा का उद्देश्य चरित्र–निर्माण, आत्मविश्वास, मानसिक शक्ति, विवेक, आत्मनिर्भरता और सेवा–भाव का विकास करना होना चाहिए। वे ऐसी शिक्षा के समर्थक थे जो व्यक्ति को अपने पैरों पर खड़ा करे और समाज के निर्धन तथा वंचित वर्गों तक पहुँचे। प्रस्तुत शोध–पत्र में स्वामी विवेकानंद के जीवन–दर्शन, उनकी शिक्षा संबंधी अवधारणाओं, मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा के सिद्धांत, चरित्र–निर्माण, स्त्री–शिक्षा, जन–शिक्षा तथा गुरु–शिष्य परंपरा पर उनके विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली की चुनौतियों के समाधान हेतु विवेकानंद के विचार आज भी कितने प्रासंगिक हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में भी उनके कई सिद्धांतों का प्रतिबिंब दिखाई देता है। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि विवेकानंद की शिक्षा–दृष्टि सर्वांगीण विकास, आत्मविश्वास तथा राष्ट्र–निर्माण की भावना पर आधारित है, जो आज की मूल्य–विहीन होती जा रही शिक्षा व्यवस्था के लिए एक मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है।

मुख्य शब्द

स्वामी विवेकानंद, शिक्षा–दर्शन, चरित्र–निर्माण, मनुष्य–निर्माण, राष्ट्रनिर्माण, आत्मनिर्भरता, आध्यात्मिक शिक्षा।

प्रस्तावना

भारतीय शिक्षा–चिंतन की परंपरा में स्वामी विवेकानंद (1863–1902) का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में जब भारत औपनिवेशिक सत्ता के अधीन सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संकट से गुजर रहा था, उस समय स्वामी विवेकानंद ने न केवल भारतीय संस्कृति और वेदांत दर्शन को विश्व–मंच पर प्रतिष्ठित किया, बल्कि शिक्षा के स्वरूप, उद्देश्य तथा प्रणाली को लेकर भी एक मौलिक एवं क्रांतिकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उनका मानना था कि किसी भी राष्ट्र का वास्तविक उत्थान उसकी शिक्षा–व्यवस्था की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति, जो मुख्यतः सूचना–संग्रहण तथा परीक्षा–केंद्रित थी, उसकी सीमाओं को उन्होंने भलीभाँति पहचाना और भारतीय आध्यात्मिक परंपरा के साथ उसका समन्वय करने का प्रयास किया।

प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य स्वामी विवेकानंद के शिक्षा संबंधी विचारों का समग्र एवं व्यवस्थित अध्ययन प्रस्तुत करना है, जिससे यह समझा जा सके कि उनकी शिक्षा–दृष्टि आज के शैक्षिक परिदृश्य में किस प्रकार सार्थक भूमिका निभा सकती है।

शोध का उद्देश्य

- स्वामी विवेकानंद के जीवन एवं शिक्षा–दर्शन की पृष्ठभूमि को समझना।
- उनकी ''मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा'' की अवधारणा का विश्लेषण करना।
- चरित्र–निर्माण, आध्यात्मिक शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा पर उनके विचारों का अध्ययन करना।
- स्त्री–शिक्षा एवं जन–शिक्षा संबंधी उनकी दृष्टि का मूल्यांकन करना।
- वर्तमान शिक्षा प्रणाली के संदर्भ में उनके विचारों की प्रासंगिकता को रेखांकित करना।

शोध विधि

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। इसमें स्वामी विवेकानंद के मूल भाषणों, पत्रों तथा ''कम्प्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद'' में संकलित सामग्री के साथ–साथ द्वितीयक स्रोतों जैसे विद्वानों की पुस्तकों, शोध–पत्रों तथा शैक्षिक आलेखों से प्राप्त आंकड़ो का विश्लेषण किया गया है।

स्वामी विवेकानंदः संक्षिप्त जीवन परिचय

स्वामी विवेकानंद का जन्म 12 जनवरी 1863 को कोलकाता के एक कुलीन बंगाली परिवार में हुआ था। उनका बचपन का नाम नरेंद्रनाथ दत्त था। बाल्यकाल से ही वे कुशाग्र बुद्धि, जिज्ञासु स्वभाव तथा गहन आध्यात्मिक रुचि के धनी थे। पश्चिमी दर्शन, विज्ञान तथा साहित्य के गहन अध्ययन के साथ–साथ उन्होंने भारतीय वेदांत, उपनिषद तथा भक्ति–परंपरा का भी सूक्ष्म अध्ययन किया। रामकृष्ण परमहंस से उनकी भेंट उनके जीवन का निर्णायक मोड़ सिद्ध हुई, जिसने उन्हें आध्यात्मिक साधना तथा मानव–सेवा के मार्ग पर अग्रसर किया।

सन् 1893 में शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में दिए गए उनके ऐतिहासिक भाषण ने भारतीय संस्कृति, धर्म–सहिष्णुता तथा वेदांत दर्शन को विश्व–पटल पर नई पहचान दी। इसके पश्चात उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की, जिसका उद्देश्य केवल आध्यात्मिक प्रचार नहीं, अपितु शिक्षा, स्वास्थ्य एवं समाज–सेवा के माध्यम से जन–कल्याण करना था। उनका संपूर्ण जीवन इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने सिद्धांत और व्यवहार, अध्यात्म और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच सामंजस्य स्थापित किया।

विवेकानंद की शिक्षा संबंधी अवधारणा

1. शिक्षा की परिभाषा

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा की जो परिभाषा दी, वह पारंपरिक पश्चिमी दृष्टिकोण से सर्वथा भिन्न है। उनके अनुसार, शिक्षा मनुष्य में पहले से विद्यमान पूर्णता की अभिव्यक्ति है। इस परिभाषा के अनुसार शिक्षा बाहर से थोपी जाने वाली वस्तु नहीं, बल्कि भीतर से प्रकट होने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक मनुष्य के भीतर अनंत शक्ति, ज्ञान तथा पवित्रता पहले से विद्यमान है; शिक्षक अथवा शिक्षा–प्रणाली का कार्य केवल उन बाधाओं को दूर करना है जो इस आंतरिक पूर्णता की अभिव्यक्ति में बाधक बनती हैं।

इस दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य केवल जानकारी एकत्र करना अथवा तथ्यों को रटना नहीं है। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि यदि किसी व्यक्ति ने पाँच पुस्तकें रटकर परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है, परंतु उसके चरित्र में कोई परिवर्तन नहीं आया, उसमें आत्मविश्वास, संवेदनशीलता तथा नैतिक बल विकसित नहीं हुआ है, तो वह वास्तविक अर्थों में शिक्षित नहीं कहा जा सकता।

2. मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा

विवेकानंद की शिक्षा–दृष्टि का केंद्रीय तत्त्व ''मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा'' की अवधारणा है। उनके अनुसार वास्तविक शिक्षा वह है जो व्यक्ति के भीतर आत्मविश्वास, साहस, सेवा–भावना तथा चारित्रिक दृढ़ता का विकास करे। उन्होंने कहा था कि हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र का निर्माण हो, मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो तथा व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके। केवल डिग्री प्राप्त करना अथवा सरकारी नौकरी के योग्य बनना शिक्षा का उद्देश्य नहीं होना चाहिए।

उनके अनुसार आदर्श शिक्षा प्रणाली वह होगी जो युवाओं में निर्भीकता, आत्मनिर्भरता तथा जीवन की विषम परिस्थितियों का सामना करने की क्षमता उत्पन्न करे। उन्होंने युवाओं का आह्वान करते हुए कहा था कि उन्हें लौह–सदृश मांसपेशियों तथा इस्पात–सदृश स्नायुओं की आवश्यकता है, जिनके भीतर ऐसा मन हो जो प्रकृति के रहस्यों को भी भेद सके। यह कथन उनकी शिक्षा–दृष्टि में शारीरिक बल, मानसिक दृढ़ता तथा बौद्धिक क्षमता के समन्वित विकास पर बल देता है।

3. चरित्र–निर्माण

स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा का मूल उद्देश्य चरित्र–निर्माण है। उनका प्रसिद्ध कथन है कि यदि आपने पाँच विचारों को आत्मसात कर उन्हें अपने जीवन तथा चरित्र में उतार लिया है, तो वह उस व्यक्ति से कहीं अधिक शिक्षित है जिसने पूरी पुस्तकालय की पुस्तकें कंठस्थ कर ली हैं। चरित्र–निर्माण के लिए उन्होंने संयम, अनुशासन, सत्यनिष्ठा तथा सेवा–भावना को आवश्यक बताया। उनका मानना था कि संस्कारयुक्त तथा नैतिक दृष्टि से सुदृढ़ व्यक्ति ही समाज एवं राष्ट्र के लिए वास्तविक संपत्ति है।

उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि चरित्र–निर्माण की प्रक्रिया औपचारिक कक्षा–शिक्षण तक सीमित नहीं रह सकती। इसके लिए वातावरण, संगति, गुरु का आदर्श तथा निरंतर अभ्यास आवश्यक है। उनके अनुसार धर्म और नैतिकता की शिक्षा जीवन के प्रत्येक पक्ष में समाहित होनी चाहिए, न कि केवल पाठ्यक्रम के एक विषय के रूप में पढ़ाई जानी चाहिए।

4. आध्यात्मिक एवं धार्मिक शिक्षा

विवेकानंद के अनुसार शिक्षा को केवल भौतिक उन्नति तक सीमित नहीं रखा जा सकता। उन्होंने वेदांत के ''सर्वं खल्विदं ब्रह्म'' के सिद्धांत को आधार बनाते हुए यह प्रतिपादित किया कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर दिव्यता विद्यमान है, और शिक्षा का कार्य इस दिव्यता को जागृत करना है। उनकी दृष्टि में धर्म का अर्थ संकीर्ण साम्प्रदायिकता नहीं, बल्कि सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों तथा आत्मिक विकास से था। उन्होंने सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता तथा समन्वय की भावना पर बल दिया।

आध्यात्मिक शिक्षा के माध्यम से उन्होंने युवाओं में निर्भयता, संयम तथा सेवा–भावना जागृत करने का प्रयास किया। उनका प्रसिद्ध सूत्र ''उत्तिष्ठत जाग्रत'' (उठो, जागो) आज भी युवाओं के लिए प्रेरणा–स्रोत है, जो आत्म–जागरण एवं आत्म–साक्षात्कार की ओर संकेत करता है।

5. शारीरिक शिक्षा एवं मानसिक दृढ़ता

विवेकानंद शारीरिक स्वास्थ्य तथा बल को शिक्षा का अनिवार्य अंग मानते थे। उनका प्रसिद्ध कथन है कि फुटबॉल के मैदान से भगवद्गीता की ओर बढ़ना अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि सुदृढ़ शरीर एवं दृढ़ स्नायु के बिना गहन आध्यात्मिक साधना भी संभव नहीं। उन्होंने युवाओं को व्यायाम, कुश्ती तथा शारीरिक श्रम के महत्त्व को समझाया और कमजोरी को उन्होंने सबसे बड़ा पाप बताया। उनके अनुसार भय तथा दुर्बलता मनुष्य के सर्वाधिक बड़े शत्रु हैं, और शिक्षा का कार्य इन्हें दूर कर निर्भीकता तथा आत्मबल का संचार करना है।

शिक्षण पद्धति एवं गुरु–शिष्य संबंध

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षण की उस पद्धति का समर्थन किया जिसे प्राचीन भारतीय गुरुकुल परंपरा में ''श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन'' कहा गया है। उनके अनुसार ज्ञान का वास्तविक हस्तांतरण केवल व्याख्यान अथवा पुस्तकीय अध्ययन से नहीं, बल्कि गुरु के सान्निध्य, अनुभव तथा आत्मसंयम के अभ्यास से होता है। उन्होंने केंद्रापसारी की अपेक्षा केंद्राभिसारी शिक्षण पद्धति पर बल दिया, जिसमें विद्यार्थी की एकाग्रता–शक्ति को शिक्षा की कुंजी माना गया। उनके अनुसार एकाग्रता ही ज्ञान–प्राप्ति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साधन है। उन्होंने कहा था कि जिस मात्रा में मन एकाग्र होने में सक्षम होता है, उसी मात्रा में वह किसी भी विषय को गहराई से समझ सकता है। यही कारण है कि उन्होंने ध्यान, योग तथा एकाग्रता के अभ्यास को शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग बनाने की सलाह दी।

गुरु–शिष्य संबंध के विषय में उनका मानना था कि सच्चा शिक्षक वही है जो विद्यार्थी की आत्मा से सीधा संवाद स्थापित कर सके, केवल सूचना का हस्तांतरण न करे। शिक्षक का दायित्व है कि वह विद्यार्थी के भीतर की क्षमताओं को पहचाने तथा उन्हें विकसित होने का अवसर प्रदान करे, ठीक उसी प्रकार जैसे एक माली पौधे को पानी और उर्वरक देकर उसकी स्वाभाविक वृद्धि में सहायक बनता है, परंतु उसकी वृद्धि की प्रक्रिया में हस्तक्षेप नहीं करता।

स्त्री–शिक्षा संबंधी विचार

स्वामी विवेकानंद स्त्री–शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। उनका मानना था कि किसी भी राष्ट्र की उन्नति तब तक संभव नहीं जब तक उसकी स्त्रियों की स्थिति में सुधार न हो। उन्होंने कहा था कि जिस प्रकार एक पक्षी दोनों पंखों के बिना उड़ान नहीं भर सकता, उसी प्रकार समाज भी पुरुष और स्त्री दोनों की समान भागीदारी के बिना प्रगति नहीं कर सकता। उनके अनुसार स्त्रियों को धार्मिक, नैतिक तथा व्यावहारिक शिक्षा के साथ–साथ आत्मनिर्भरता के लिए आवश्यक कौशल भी सिखाए जाने चाहिए।

उन्होंने पश्चिमी स्त्री–शिक्षा के अंधानुकरण का विरोध करते हुए यह सुझाव दिया कि भारतीय स्त्रियों की शिक्षा भारतीय आदर्शों, सीता एवं सावित्री जैसे चरित्रों की गरिमा तथा राष्ट्रीय संस्कृति के अनुरूप होनी चाहिए, परंतु साथ ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं आधुनिक ज्ञान का समावेश भी आवश्यक बताया। उनकी दृष्टि में शिक्षित नारी ही आदर्श संतान, सुसंस्कृत परिवार तथा सशक्त समाज का निर्माण कर सकती है।

जन–शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण

विवेकानंद शिक्षा को कुछ विशेषाधिकार–प्राप्त वर्गों तक सीमित रखने के विरुद्ध थे। उनका दृढ़ मत था कि शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है, चाहे वह किसी भी जाति, वर्ग अथवा आर्थिक स्थिति का क्यों न हो। उन्होंने गरीब, वंचित तथा ग्रामीण जनसंख्या तक शिक्षा पहुँचाने पर विशेष बल दिया। उनका कहना था कि जब तक करोड़ों भूखे तथा अशिक्षित लोग जीवित हैं, तब तक उनकी उपेक्षा करके प्राप्त किया गया कोई भी दर्शन अथवा धर्म देशद्रोह के समान है।

इस दृष्टिकोण के अनुरूप उन्होंने रामकृष्ण मिशन के माध्यम से ऐसी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया जो निर्धन एवं वंचित वर्गों तक शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सेवा की सुविधाएँ पहुँचा सकें। उनका मानना था कि पहले जनसाधारण की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की जानी चाहिए, तत्पश्चात ही उच्च आध्यात्मिक तथा बौद्धिक शिक्षा की बात की जा सकती है।

भारतीय एवं पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली का समन्वय

स्वामी विवेकानंद ने न तो पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली का पूर्ण अंधानुकरण स्वीकार किया, न ही भारतीय परंपरा को हर स्थिति में श्रेष्ठ मानकर पश्चिम की उपलब्धियों की उपेक्षा की। उन्होंने दोनों के गुणों के समन्वय पर बल दिया। उनके अनुसार पश्चिम से विज्ञान, प्रौद्योगिकी, संगठन–क्षमता तथा भौतिक प्रगति के सिद्धांत सीखे जा सकते हैं, जबकि भारत की आध्यात्मिकता, नैतिक मूल्य तथा चरित्र–निर्माण की परंपरा को आधार बनाकर एक संतुलित शिक्षा–प्रणाली विकसित की जानी चाहिए।

उनका मानना था कि तत्कालीन ब्रिटिश शिक्षा–प्रणाली, जो मुख्यतः क्लर्क तथा सरकारी कर्मचारी उत्पन्न करने पर केंद्रित थी, भारतीय युवाओं के आत्मविश्वास तथा मौलिक चिंतन–क्षमता को कुंठित कर रही थी। इसके स्थान पर उन्होंने ऐसी शिक्षा–प्रणाली का सुझाव दिया जो युवाओं को स्वावलंबी, उद्यमी तथा नवाचार में सक्षम बनाए।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली की समीक्षा और विवेकानंद के विचारों की प्रासंगिकता

इक्कीसवीं शताब्दी की शिक्षा–प्रणाली अनेक चुनौतियों से जूझ रही है जैसे परीक्षा–केंद्रित पाठ्यक्रम, अंकों की होड़, नैतिक मूल्यों का ह्रास, मानसिक तनाव, तथा रोजगार–उन्मुख शिक्षा पर अत्यधिक बल, जिसमें चरित्र–निर्माण तथा सर्वांगीण विकास की उपेक्षा हो रही है। ऐसी स्थिति में स्वामी विवेकानंद के विचार अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी समग्र एवं बहु–विषयक शिक्षा, जीवन–कौशल विकास, नैतिक शिक्षा तथा भारतीय ज्ञान–परंपरा के समावेश पर बल दिया गया है, जो विवेकानंद के विचारों से गहराई से मेल खाता है। उनकी ''मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा'' की अवधारणा आज के तनावग्रस्त तथा प्रतिस्पर्धा–प्रधान शैक्षिक वातावरण में विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य, आत्मविश्वास तथा संवेदनशीलता के विकास हेतु एक व्यावहारिक मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है।

इसके अतिरिक्त, विवेकानंद द्वारा प्रतिपादित एकाग्रता, ध्यान तथा योग की अवधारणाएँ आज विश्व भर के शिक्षा–मनोविज्ञान में स्वीकृत हो चुकी हैं। अनेक शोध अध्ययन यह पुष्टि करते हैं कि ध्यान एवं एकाग्रता–अभ्यास से विद्यार्थियों की स्मरण–शक्ति, तनाव–प्रबंधन क्षमता तथा शैक्षिक निष्पादन में सुधार होता है। इस प्रकार विवेकानंद का शिक्षा–दर्शन केवल दार्शनिक चिंतन तक सीमित न रहकर व्यावहारिक शिक्षाशास्त्र के रूप में भी प्रासंगिक सिद्ध होता है।

निष्कर्ष

स्वामी विवेकानंद का शिक्षा–दर्शन भारतीय आध्यात्मिक परंपरा तथा आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य करता है। उनके अनुसार शिक्षा का मूल उद्देश्य केवल जीविकोपार्जन के साधन उत्पन्न करना नहीं, बल्कि ऐसे मनुष्यों का निर्माण करना है जो चरित्रवान, आत्मनिर्भर, निर्भीक तथा समाज एवं राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी हों। उनकी 'मनुष्य–निर्माणकारी शिक्षा' की अवधारणा, चरित्र–निर्माण पर बल, स्त्री–शिक्षा एवं जन–शिक्षा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता, तथा भारतीय एवं पाश्चात्य शिक्षा प्रणालियों के समन्वय की उनकी दृष्टि आज भी उतनी ही सार्थक है जितनी उनके समय में थी।

वर्तमान समय में जब शिक्षा प्रणाली अंकों, प्रमाणपत्रों तथा प्रतिस्पर्धा तक सिमटती जा रही है, स्वामी विवेकानंद के विचार हमें यह स्मरण कराते हैं कि वास्तविक शिक्षा वही है जो मनुष्य के भीतर की दिव्यता, नैतिक बल तथा सेवा–भावना को जागृत करे। अतः शिक्षाविदों, नीति–निर्माताओं तथा शिक्षकों को चाहिए कि वे विवेकानंद के शिक्षा–दर्शन से प्रेरणा लेकर एक ऐसी समग्र शिक्षा–प्रणाली का निर्माण करें जो भावी पीढ़ी को न केवल कुशल बनाए बल्कि उसे संवेदनशील, चरित्रवान तथा राष्ट्र–निर्माण के प्रति समर्पित नागरिक भी बनाए। शिक्षा व्यवस्था को यदि विवेकानन्द के "मानव–निर्माण" आदर्श के अनुरूप ढाला जाए, तो भारत एक शक्तिशाली, नैतिक और समृद्ध राष्ट्र बन सकता है। उनके शब्द आज भी प्रेरणा देते हैं "उठो, जागो और तब तक नहीं रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।" शिक्षा के क्षेत्र में उनके विचार शाश्वत प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची

1. विवेकानंद, स्वामी (2013) *कम्प्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद (खंड 1–9).* अद्वैत आश्रम, कोलकाता।
2. चेतनानंद, स्वामी (1994) *विवेकानंदः ईस्ट मीट्स वेस्ट.* अद्वैत आश्रम, कोलकाता।
3. निखिलानंद, स्वामी (1953) *विवेकानंदः ए बायोग्राफी.* रामकृष्ण–विवेकानंद केंद्र, न्यूयॉर्क।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. दत्ता, भूपेंद्रनाथ (1954) *स्वामी विवेकानंदः पैट्रियट–प्रोफेट.* अभिषेक पब्लिकेशन, पंचकुला, हरियाणा।
6. शर्मा, आर. एन. एवं शर्मा, आर. के. (2006) *शिक्षा दर्शन.* अटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा. लि., नई दिल्ली।
7. Pathak, R.P. (2007) *Philosophical and Sociological Perspectives of Education.* Atlantic Publishers, New Delhi.

——==00==——